प्रति

इस
से व
है।
कहा
के प्र

इस
जो
शास
कहा
नरस
का
शिख
के उ
करा
लिख
इसी

इस
भार
व्यव
ढंग

विकास पेपर बैक्स
मेन रोड, गांधी नगर, दिल्ली-110031

प्रतिहिंसा तथा अन्य कहानियाँ

मुद्राराक्षस

© लेखक

प्रकाशक
विकास पेपरबैक्स
IX/221, मेन रोड, गांधीनगर
दिल्ली-110031

प्रथम संस्करण
1992

मूल्य
पचास रुपये

मुद्रक
अजय प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-110032

PRATIHINSA TATHA ANYA KAHANIYAN (Hindi)
by Mudrarakshas
Price : Rs. 50.00

अपने प्रिय साथी
विलायत जाफ़री को

करूँगा। उनचास घोड़े और पचास हाथी लेकर असुर दानव आया। माता के हाथ में ढाल और तलवार थी—

रामेश्वर ने आसमान की तरफ देखा। सीने में कुछ ऐसा कंपन हुआ जैसे खाँसी आनेवाली हो—पर खाँसी के बजाय फिर हिचकी-सी आकर रुक गई।

उतरती शाम की तरफ उछाली जाती रस्सियों की तरह गीत अब बहुत दिशाओं से सुनाई देने लगा था।

ठीक इसी वक्त मैंने देखा, रामेश्वर बाबू के होंठों की वह मुस्कराहट वहाँ से गायब होने लगी—

'नहीं रामेश्वर बाबू, नहीं!' मैंने कहना चाहा पर उस गायब होती मुस्कराहट के साथ खाँसी की एक और कोशिश के बाद होंठों की बाईं कोर से रक्त की जो रेखा फूटी उसने मुझे चुप करा दिया।

हो जाने दो। उसे फरार हो जाने दो। हाथ में ढाल और तलवार—मल्लावाँ माई राजा से बदला लेगी न?

मुठभेड़

कितनी लम्बी और तीखी मार होती है फिर वह चाहे मौसम की हो या सिपाही की। चीखकर उड़ी फड़फड़ाती हुई चील की तरह रज्जन की तकलीफ-भरी हुई एक सदा-सी सुन पड़ी—"ओ माँ···"

नत्थू के हाथ कमर में बँधे कपड़े के छोर से बनाई छोटी-सी पोटली पर इस कदर ढीले पड़ गए कि पोटली उसके बदन का हिस्सा जैसा न बनी होती तो जरूर सरक गिरती। आवाज, बाँस जैसी तड़कती हुई तकलीफ-भरी वह चीख, ज्यादा लम्बी नहीं थी लेकिन नत्थू की पसलियों के अन्दर बहुत दूर तक और देर तक लकीर-सी खींचती चली गई।

कितनी लम्बी और तीखी मार होती है फिर चाहे वह मौसम की हो या सिपाही की।

जून की इस बहुत तीखी और बहुत ज्यादा चढ़े बुखार की तरह बेआवाज धूप में नत्थू जहाँ ठिठक गया था, वहाँ से सिर्फ कुछ कदम आगे ही उसके मकान की पिछली दीवार थी। कच्ची मिट्टी से खड़ी की गई उस दीवार पर सफेद सीपियाँ और घोंघे इस तरह उभर आए थे गोया वे वहाँ जड़ दिए गए हों। उस सफेद पच्चीकारी के बीच पानी की धार से कटी मिट्टी की सँकरी खड़ी धारियाँ जाहिर कर रही थीं कि मौसम की अगली मार पड़ते ही दीवार गलकर गिर जाएगी। शायद इस दीवार के गिरने पर भी वैसी ही दहलानेवाली और भद्दी आवाज हो जैसी आवाज इस बार रज्जन की सुनाई दी थी। नत्थू ठहर गया था। हो सकता है वह अगली चीख का इन्तजार कर रहा हो या फिर पहली ही चीख के अपने अन्तर में डूबने का समय लेना चाहता हो। रज्जन की आवाज दुबारा नहीं आई। मौसम की मार से छिली हुई दीवार की तरह ही शायद डंडे के सिर्फ एक

और आघात से वह भी गिरा हो तालाब की मिट्टी से बनी काली-भूरी दीवार-सा।

इतने समय में पोटली उसने दुबारा सावधानी से पकड़ ली थी। पोटली में काफी तादाद में तोड़ी अरहर की फलियाँ थीं। इन्हें छिलके सहित उबाल लेने के बाद थोड़े से नमक की मदद से खासे स्वादिष्ट भोजन के रूप में काम में लाया जा सकता था। खाने के मामले में उसके लिए यह मौसम लगभग समृद्धि काल होता था। हर किसी के लिए यह जानना आसान नहीं होता कि दुनिया का सबसे उम्दा खाना क्या होता है लेकिन नत्थू को यह जरूर मालूम था कि मिट्टी और सड़े पत्तों के बीच टपकनेवाले महुए के रस भरे हुए सफेद फूलों या फलों के बाद सबसे जायकेदार खाना अरहर की उबली हुई फलियाँ होती थीं। अरहर एक ऐसी बदतमीज फसल है जो बिना किसी खाद या पानी के, बगैर किसी सही देखरेख के खेत में बेतरतीबी से खड़ी रहती है और इतने लम्बे अरसे तक खड़ी रहती है कि लगता है वह वहाँ हमेशा ऐसी ही बनी रहेगी। खेत की हिफाजत करनेवाला ही नहीं, उसे चर जानेवाला जानवर भी अक्सर उसकी तरफ से उदासीन हो जाता था। ऐसे में झुलसाकर सुखाए आदमियों की खड़खड़ाती बेजान भीड़ की तरह खड़े उस खेत से दो पाव फलियाँ तोड़ लेना मामूली बात थी।

रज्जनलाल की उस कातर चीख के बाद सब खामोश हो गया। सिर्फ एक ऐसे परिंदे की आवाज आती रही जिसके बारे में नत्थू ने ही नहीं, गाँव के हर आदमी ने एक ही वीभत्स और जुगुप्साजनक कहानी सुनी थी। सच तो यह है कि बहुत स्वादिष्ट महुए एकत्र करते हुए अक्सर वह परिंदा बोलता जरूर था और उसे वही कहानी याद भी आती थी। कहते हैं कभी एक बूढ़ी औरत ने घर के बाहर धूप में महुए फैलाए और लकड़ी बीनने जाते वक्त अपने एकमात्र पोते से कह गई कि वह महुओं की हिफाजत करे। धूप से सूखकर महुए बहुत कम हो गए। बुढ़िया ने वापस लौटकर समझा कि बच्चा चोरी से महुए खा गया। बुढ़िया ने बच्चे को सिल के पत्थर से मारा। बच्चा मर गया। लोगों ने बुढ़िया को बताया कि महुए चोरी नहीं गए थे, सूखकर कम हो गए थे। इसके बाद बुढ़िया एक चिड़िया बन गई और हर दोपहर आवाज लगाने लगी—उठो पुत्तू, पूर, पूर, पूर—

रज्जन को वे लोग सुबह कोई आठ बजे ले गए थे। उनमें से एक छोटा थानेदार था, बाकी सिपाही थे। रज्जन से उन्हें क्या जानना था यह शायद ही किसी को मालूम रहा हो।

रज्जन को जिस वक्त पुलिस ले चली, उसके पीछे बच्चों की खासी ही भीड़ थी लेकिन मर्द या औरत कोई नहीं था। बच्चे शायद वहाँ बहुत देर तक रहे हों। गाँव के बाहर प्रधान के खेतों से कटकर आनेवाले अनाज के इकट्ठा करने की जगह और छोटे से एक कमरे के स्कूल के पीछे से होकर रास्ता कुछ बेढंगी कब्रों के बीच से गुजरता हुआ एक टीले जैसी जगह की तरफ निकल जाता था। इस टीले पर पलाश की धूल से अंटी झाड़ियाँ और मकड़ी के जाले जैसे फूल उगानेवाली लम्बी सूखी घास थी।

बच्चों और रज्जन को उधर जाते देखनेवालों में नत्थू भी था। जाने कैसे उसे लगा था कि उसे वहाँ उस वक्त दिखाई नहीं देना चाहिए। शायद उसी अपरिभाषेय आशंका के कारण उसने सोचा था कि फलियाँ तोड़ने में ज्यादा वक्त लगाना चाहिए और फिर जहाँ तक बने, सीधे रास्ते घर नहीं लौटना चाहिए।

लम्बा रास्ता तय करके गाँव के करीब आते-आते उसने वह आवाज सुनी, बहुत दूर से और बहुत ज्यादा तकलीफ में छटपटाती आवाज। वह रज्जन की आवाज थी। कुछ ऐसी जैसे कीचड़ के बीच नोकदार लकड़ी से छेद दी गई मछली हो। रज्जन की उस चीख के साथ ही बबूल के झीने बेडौल दरख्तों के बीच से कहीं से उस परिंदे की आवाज आने लगी—उठो पुत्तू, पूर, पूर, पूर। जैसे वह कह रहा हो—बेटा, उठ जाओ, महुआ कम नहीं हुआ है, पूरा है। यह चिड़िया बोलना शुरू करती है तो बोलती ही जाती है, तीखी दर्दभरी आवाज में, अक्सर घण्टों—उठो पुत्तू, पूर, पूर, पूर—

रज्जन की आवाज के साथ बच्चों का वह हुजूम भागता हुआ स्कूल नाम के उस अधगिरे सायबान के पास आ गया। शायद उन्हें पुलिसवालों ने धमकाकर भगा दिया था। बच्चों के उस हुजूम में ही रज्जन का बेटा भी था। स्कूल के पास ठहरकर बच्चों ने उसकी तरफ देखा। उनकी निगाहों में न कोई कुतूहल था न करुणा। उसे देखकर वे अपनी-अपनी व्यस्तता का

साधन खोजने लगे। रज्जन का बेटा अभी तक सामान्य दीख रहा था पर वह एकाएक कमजोर और बीमार दिखने लगा। उसका साँवला चेहरा ऐसा हो आया जैसे उस पर राख की एक परत आ जमी हो। वह धीरे से सूखे हुए गोबर के एक ढेर पर बैठ गया। बच्चों को अपनी व्यस्तता खोजने में ज्यादा देर नहीं लगी। एक बहुत ऊँचे बीमार आम के पेड़ की सबसे ऊँची डाल पर लटके एक सूखे से कच्चे आम को तोड़ने के लिए वे मिट्टी और पत्थर के ढेले उछालने लगे।

वह आम शायद बहुत दिनों से वहीं था। या फिर एक गिर जाने पर दूसरा प्रकट हो जाता था। बच्चे लम्बे अरसे से उस पर ढेले चला रहे थे। किसी को पता नहीं वह आम कभी गिरा भी था या नहीं और गिरा था तो खाया गया था या नहीं। हाँ, बच्चों की इस कोशिश पर उस स्कूल के ऊपर रखी गई टिन की चादरें गिरते हुए ढेलों की वजह से खासा शोर करती थीं। काफी पत्थर गिर चुकने के बाद अन्दर से स्कूल के एकमात्र अध्यापक किशन बाबू की आवाजें सुनाई देती थीं—"ठहर जाओ सालो !"

इस ललकार के बाद बच्चे ईंटें फेंकना बन्द करके किसी और काम में लग जाते थे।

आम के उस दरख्त पर फेंके गए दो-तीन ढेलों के बाद ही इस बार अध्यापक किशन बाबू की आवाज नहीं, आकृति बाहर आ गई। यह काफी अनहोनी घटना थी। बच्चे सहमकर खड़े हो गए।

"भाग जाओ···" किशन बाबू भारी आवाज में बोले। बच्चे भाग गए। किशन बाबू स्कूल के अन्दर नहीं गए। गर्द और धूप से पीलिया के रोगी जैसे दीखते क्षितिज पर आँखें गड़ाकर उस तरफ देखने लगे जिधर से रज्जन के चीखने की आवाजें आ रही थीं। अब वे चीखने की आवाजें नहीं कुछ ऐसी ध्वनियाँ थीं जैसे वे गले से नहीं सीधे फेफड़े से उबलकर बाहर आ रही हों।

स्कूल के आसपास एकदम सन्नाटा था। वह स्कूल था, इस बात पर शायद ही कोई विश्वास कर सके। कच्चे फर्श और टीन की छतवाले उस लंबोतरे कमरे में दूसरे से चौथे दर्जे तक की कक्षाएँ एक साथ लगती थीं। कमरे के तीन कोनों में और चौथे कोने में एक मेज के सहारे किशन बाबू

बैठते थे। वे इस स्कूल के अध्यापक भी थे और पोस्टमास्टर भी। कुछ गालियों के साथ बच्चों को लगातार लिखते रहने का कोई काम देने के बाद वे सो जाते थे। कभी-कभी खीझ के साथ एक पोस्टकार्ड देने या खत लिखने के लिए उन्हें जागना होता था।

जागने पर किशन बाबू बहुत जोर से खीझते थे। लेकिन बहुत थोड़े समय के लिए। जगानेवाला उनकी खीझ से परेशान होने के बजाय हँसता था। वे अजीब चरित्र थे। उनकी चरित्रगत विशिष्टता ही थी कि वे या तो सिर्फ अध्यापक के रूप में जाने जाते थे या डाकखाना के नाम से। पोस्टमास्टर शब्द वैसे भी सहज नहीं था पर उनके स्वभाव के कारण लोगों को उन्हें डाकखाना कहना अच्छा लगता था। इसकी वजह थी। खासी मसखरी वजह। गाँववालों का विश्वास था कि खत ही नहीं तार से भी ज्यादा जल्दी पहुँचती हैं वे बातें, जोकि किशन बाबू को बता दी जाती हैं। इसीलिए वे डाक बाबू नहीं डाकखाना माने जाते थे।

लेकिन इसमें कसूर किशन बाबू का नहीं था। वे जिन्दगी में शायद ही कभी किसी ऐसी जगह गए होंगे जहाँ कोई मनोरंजन कर सकता हो। मन लगाने के लिए उम्र बढ़ने के साथ-साथ उन्होंने वह तरीका खोज लिया था जिसे भद्दी भाषा में अक्सर लोग चुगली खाना कह लेते हैं।

उस छोटे से गाँव में यह एकमात्र सबसे सुलभ और लोकप्रिय मनोरंजन था। इस मनोरंजन की खूबी यह थी कि यह अक्सर कई रोज निरन्तर मन बहला सकता था। पड़ोस के गाँव में नौटंकी होती थी। उससे आगे एक कस्बा पड़ता था जिसमें एक अदद सिनेमा था। मगर ये दोनों ही बहुत सीमित मनोरंजन थे। अक्सर सिनेमा या नौटंकी देखनेवाले को बाद में मनोविनोद जारी रखने के लिए खासे झूठ बोलने होते थे जो कभी-कभी पकड़े भी जाते थे। मसलन एक बार पण्डित राधेश्याम ने एक सिनेमा देखा और वापस लौटकर बताया, "बड़ी गंदी तस्वीर है। उसमें खुलेआम औरत-मर्द गड़बड़ करते हैं।"

"खुलेआम गड़बड़ करते हैं ?" पड़ोसियों में अचानक उत्सुकता जाग पड़ी।

"अरे बड़े गन्दे होते हैं ये, मत पूछो।" पण्डित ने थूका भी।

"मगर होता क्या है?" उत्सुक पड़ोसियों ने सहसा कल्पनाएँ करनी शुरू कर दीं।

"अरे क्या नहीं होता, पूछो। रंडियाँ होती हैं, कुछ भी कर सकती हैं।"

"मतलब कपड़े-वपड़े सब उतारकर?"

"लो, इस लल्लू की सुनो।"

सबने विश्वास कर लिया कि परदे पर पण्डित राधेश्याम वह कुछ देख-कर आए हैं, जो दुर्लभ होता है और वह भी इतने सुन्दर सजे-धजे लोगों के बीच होता हुआ।

एक-दूसरे को बगैर बताए एकाएक कई लोग अगले दिन गाँव से गायब हुए और जब वापस लौटे तब पण्डित राधेश्याम को उससे भी ज्यादा गन्दी गालियाँ दे रहे थे क्योंकि परदे पर उन्होंने जो देखा था उसमें बिस्तर पर जाने से पहले नायक और नायिका कपड़े उतारते जरूर दीखे लेकिन सिर्फ कपड़े ही। नायक-नायिका नहीं दीखे। उनके उतारे कपड़ों का ढेर बन गया तो गाँववालों ने उत्सुकता से साँस रोक ली। वे समझे कि अब बिस्तर पर दोनों दिखाई देंगे लेकिन परदे पर तुरन्त अँधेरा हो गया और जब उजाला हुआ तो लोग नायिका के बाप से शिकायत करने जाते दीखे।

ऐसे माहौल में बेहतरीन मनोरंजन किशन बाबू दे सकते थे—"अरे भई सुना? नहीं सुना? छोड़ो, तब तुम्हें बताने से क्या फायदा!"

किशन बाबू के इस संवाद को सुननेवाला उत्सुक से ज्यादा शर्मिंदा होता था क्योंकि किशन बाबू तुरन्त यह भी कह देते थे, "सारा गाँव जानता है, तुम्हीं कैसे अनजान बने हो? मुझे तो स्कूल को देर हो रही है।"

यह संवाद बोलने के बाद किशन बाबू स्कूल की तरफ चल भी पड़ते थे। ऐसी हालत में वह वाक्य सुननेवाला इस आशंका से लगभग बौखला जाता था कि किसी बेहद रोचक प्रसंग की हिस्सेदारी से वह वंचित रह जाएगा। तब वह एकाएक प्रार्थी हो जाता था बल्कि चापलूस। कुतूहल से चिकनाई आँखों इधर-उधर ताकता हुआ किशन बाबू से सट जाता था। "कसम से डाकखाना बाबू, इधर हम ऐसे फँसे रहे कि पूछो मत।"

"तो फिर फँसे रहो बच्चू! मैं तो प्रपंच में पड़ता नहीं। सारा गाँव

जानता है नन्दू की घरवाली का किस्सा···"

इसके बाद किशन बाबू वहाँ ठहरते नहीं थे। धीरे-धीरे अगले दिन तक गाँव का हर मर्द छोटा-मोटा किशन बाबू बन जाता था। वह यह सिद्ध करना चाहता था कि नन्दू की घरवाली के काण्ड का प्रथम उद्घाटनकर्ता वही है। यह सिद्ध करने में वह किस्से को अपनी कल्पना के पूरे कौशल से गढ़ने की कोशिश करता था। इस किस्से को सुननेवाला इसे अपना मौलिक उद्घाटन मनवाने के लिए अगले आदमी को अपनी तरफ से खासा नमक-मिर्च लगाकर सुनाता था। इस तरह वह किस्सा जो भी रहा हो, कई रोज तक तरह-तरह के रूप लेता हुआ लगभग समूचे गाँव का मनोरंजन बना रहता था।

इस मनोरंजन में लोगों का मन रमाने की खासी ही शक्ति थी लेकिन यही गाँव की गड़बड़ी की जड़ भी था। गड़बड़ी कहीं राधे की साली की हो, नाम रघुनन्दन की बहू का चल पड़ता था और इस तरह जो झगड़ा उठ खड़ा होता था वह अक्सर और ज्यादा रोचक होता था। मनोरंजन का चक्र पूरा होते न होते मालूम होता था कि रघुनन्दन ने मंसा को पीट दिया और मंसा नन्दू को गाली दे आया था नन्दू ने राधे पर ईंट फेंक मारी। यह झगड़ा जल्दी शान्त नहीं होता था क्योंकि झगड़ा ठंडा जल्दी पड़ जाए तो उसमें भी मनोरंजन भाव का ही व्याघात होता था। जब नन्दू राधे को ईंट मारता था तो राधे गोपाल की चाची का भेद खोल देता था और रघुनन्दन से पिटने-वाला मंसा टिंगू के घर का परदा उघाड़ देता था। इस तरह जितनी देर ये झगड़े चलते थे मनोरंजन रस के परिपाक की संभावनाएँ बढ़ती ही जाती थीं। इसीलिए लोग एक तरफ तो दो आदमियों को समझा-बुझाकर चुप कराते थे पर कोई ऐसा सूत्र भी छोड़ देते थे जिससे अगले चार के बीच शाम तक दुबारा फसाद खड़ा हो जाए।

उस गाँव में बेहद लापरवाही लेकिन रुचि के साथ खेले जा रहे इस खेल में कुछ ऐसी रहस्यजनक शक्ति भी थी कि लगता था यह खेल खुद गाँव को खेल रहा है, डोरी से बँधी उस गरारी की तरह जो धागे से खुलती हुई जितनी तेजी से नीचे उतरती है उतनी ही फुर्ती से धागे को लपेटती हुई

दुबारा ऊपर चढ़ जाती है।

गाँव का दिन अपनी तमाम बदहाली के बावजूद उतना बुरा नहीं होता है; बल्कि उसमें कुछ ऐसा होता है जो आदमी को अपनी तरफ खींचता है, अपने से जोड़ता है चाहे वह तालाब में सड़ने के इन्तजार में छोड़े सन के पौधों का गट्ठर हो या पानी माँगता हुआ तम्बाकू का पौधा। लेकिन रात वैसी नहीं होती है। गाँव की रात में एक अनाम दहशत होती है। अँधेरे के साथ खौफ के सख्त रोएँ आदमी से ऐसे सटने लगते हैं जैसे कोई आदमखोर सूँघने की कोशिश कर रहा हो। ऐसे में आदमी या तो आग के इर्द-गिर्द आदिम कबीले की तरह वक्त गुजारता है या मिट्टी के घरों की गुफाओं में सिमट जाता है।

गाँव के दिन और रात का यही फर्क इस मनोरंजक खेल के दो पहलुओं के बीच भी था—एक पहलू लोगों की रुचि का और दूसरा उससे उपजनेवाली सामाजिक उलझन का। बड़े अनजाने और अनचाहे ही इस दूसरे पहलू की गाँठें बढ़ती गई थीं। कभी-कभी वे गाँठें इतनी सख्त हो जाती थीं कि किसी असाध्य रसौली की तरह बिना कुछ जानें लिए मानती नहीं थीं।

इस गाँव नौबन में पिछले कुछ अरसे से ऐसी ही कुछ रसौलियों ने जबर्दस्त दर्द और तनाव पैदा कर दिया था। रिश्तों की ये रसौलियाँ कब मारक हो उठीं यह कोई नहीं जानता पर पिछले साल जबर्दस्त सर्दियों में चींटियों से लिपटी नन्हे की लाश के साथ खासी गड़बड़ी शुरू हो गई। और उन रसौलियों की सड़न रज्जन और नत्थू से कैसे जुड़ गई इसका भविष्य भी उतना ही अतर्कित है जितना नन्हे की लाश से पैदा हुई गड़बड़ी का।

किसी ने ऐसा कहा कि नन्हे के मारे जाने के पीछे होरीलाल की छोटी बहन का कोई किस्सा है। होरीलाल ने कुछ नहीं कहा पर उसके छोटे भाई ने सन्तू को लाठियों से इसलिए बुरी तरह पीट डाला कि उसका खयाल था यह बात सन्तू ने ही उड़ाई है।

सन्तू को दुबारा होश नहीं आया। उसे चूँकि रात के अँधेरे में होरीलाल के भाई ने अकेले घेरकर मारा था इसलिए हमलावर या हमलावरों का पता नहीं चला। लेकिन एक बात बहुत तेजी से फैली या

फैलाई गई। किसी ने कहा, सन्तू डकैत था और चूँकि वह डकैत था इसलिए मदनलाल के गिरोहवाले उसकी मौत का बदला लेंगे।

मुमकिन है यह बात किशन बाबू ने ही फैला दी हो लेकिन इससे और ज्यादा मामला उलझ गया कि मदनलाल बरसातीराम का दुश्मन था। जरूर मदनलाल अपने गिरोह के साथ लाला बरसातीराम पर चढ़ाई करेगा।

इतना कुछ घट जाने के बाद नत्थू और रज्जन की भूमिका शुरू हुई। सारे घटनाक्रम से वे कुछ इस सहजता से जुड़ गए जैसे वे हमेशा से उस सबका हिस्सा बनने का हक पाकर आए हों। वे जुड़े हुए न दीखते तो जरूर अनहोनी बात होती।

नत्थू और रज्जन नौबन के खास चरित्र थे। उनकी उस विशिष्टता को लगभग हर कोई जानता था लेकिन वह जानकारी भी उसी मनोरंजन का हिस्सा थी जिसमें स्त्री-पुरुष-सम्बन्ध थे।

वे दोनों ही मुखबिर थे। दोनों सगे भाई थे लेकिन आपस में गहरी दुश्मनी थी। रज्जन डकैतों का मुखबिर था और नत्थू पुलिस का। ऐसा लोगों का खयाल था। मगर नत्थू कुछ ज्यादा चालाक था। वह डकैतों के लिए भी मुखबिरी करता था। डकैतों के कहीं मौजूद होने की सूचना पुलिस को देने के बाद वह उतनी ही फुर्ती से डकैतों को यह खबर भी पहुँचा देता था कि पुलिस को उनके बारे में खबर हो गई है। चूँकि अक्सर दोनों ही बातें सच होती थीं इसलिए नत्थू इस काम में कहीं ज्यादा सफल था।

शुरू में यह काम बहुत डराता था, खास तौर से नत्थू को। रज्जन भी शुरू में डरा था। वह जानता था कि जिस दुनिया में वह रह रहा था वहाँ का बेहतरीन मनोरंजन कानाफूसी, खतरनाक हद तक भेद खोलनेवाला यन्त्र था। बहुत जल्दी ही हर किसी को मालूम हो जाता था कि नौबन में कोई अकेला व्यक्ति चुपचाप कहाँ, क्या कर आया। पहली बार मीरपुर की शादी में आए सोने के जेवरात की खबर रज्जन ने जब मदनलाल को पहुँचाई तो वापस लौटते समय डरा। लेकिन जल्दी ही उसे मालूम हो गया कि चूँकि वह डकैत मदनलाल से सम्बन्धित माना जा रहा है इसलिए लोग उससे भी लगभग वैसा ही खौफ खाने लगे हैं जैसा डर वे खुद

मदनलाल से महसूस करते थे।

नत्थू ने पुलिस की मुखबिरी कुछ हद तक रज्जन से चिढ़ के कारण की थी। एक दिन वह एक जंगली लतर से वे काली मोटी फलियाँ तोड़कर लौट रहा था जिनके ऊपर चिपके रोएँ बेहद खुजली पैदा करते थे। वह खुजली पैदा करनेवाले उन तन्तुओं को महज एक शरारत के लिए ला रहा था। तभी उसने रज्जन को एक बिल्कुल नये रूप में देखा था। वह खासी शराब पिए हुए था और गुड़ में चने की दाल मिलाकर बनाई मिठाई का भारी-सा टुकड़ा अँगोछे में बाँधे था जिसका एक सिरा सायास विज्ञापन की तरह बाहर झाँक रहा था। रज्जन को उस दिन पहली अच्छी आमदनी हुई थी। हालाँकि यह आमदनी आसान नहीं थी फिर भी वह बहुत खुश था।

उससे सिर्फ तीन दिन पहले यह सिलसिला शुरू हुआ था। रज्जन एक दोस्त की बारात से लौट रहा था। उसने कुर्ते के ऊपर पहननेवाली सदरी राधे से माँग ली थी और कुर्ते-धोती को भरसक धो लिया था।

उसने जूते में घोड़े की जैसी नाल जड़ी हुई थी, जिसकी वजह से चलते वक्त बड़ी शानदार आवाज होती थी। सिर पर टोपी लगाने के बाद उसने एक लाठी भी ले ली थी। इस तरह चलते हुए वह अपने को खासा महत्त्व-पूर्ण व्यक्ति समझने लगा था। नौबन लौटते वक्त रात हो गई थी। सड़क के दोनों तरफ खड़े काले दरख्तों के बीच से छनकर चाँदनी के छोटे-बड़े धब्बे सड़क पर दूर तक छितराए हुए थे। उस सूनी सड़क पर चाँदनी के वे धब्बे कुचलते हुए आगे बढ़ने पर जूतों से जो आवाज होती थी उसकी ताल पर वह गाना भी गाने लगा था।

उसकी आत्मविभोर मनःस्थिति बहुत ही बेदर्दी से टूटी। बहुत बदतमीजी से उसे ललकारते हुए अपने चेहरे लपेटे जिन एक दर्जन लोगों ने उसे अचानक घेर लिया था उन्होंने न सिर्फ उसे गालियाँ ही दीं बल्कि उनमें से एक ने उसकी कमर के पास लाठी भी दे मारी। उस हमले में चोट से ज्यादा अपमान के कारण वह रो पड़ा।

उसे घेरनेवाले लोग डकैत थे। अपनी हैसियत बताने के बाद उन्होंने उसे और पीटा और जब अपनी कारगुजारी से सन्तुष्ट हो गए तो उन्होंने

उससे कहा कि उसके पास जो कुछ भी हो चुपचाप हवाले कर दे।

हवाले करने लायक रज्जन के पास सिर्फ डेढ़ रुपया था। कुछ मिठाई भी थी।

इतनी लूट से डकैत बहुत ज्यादा चिढ़ गए और उन्होंने उसे फिर पीटा। बल्कि उनमें से एक चिल्लाया, "मारकर फेंक दो साले को।"

रज्जन रोता हुआ बोला, "मुझे मारकर क्या मिलेगा दादा।"

"अबे तो फिर किसको मारकर मिलेगा, ऐं?"

इसी संवाद से रज्जन के लिए एक नया रास्ता खुल गया। उसने मुन्ना साहू का पता दे दिया और यह भी बता दिया कि पैसे उधार लेने के लिए लोग जो जेवर गिरवी रखते थे उन्हें वह भूसेवाली कोठरी में रखता था।

"साले, अगर वहाँ कुछ न मिला तो काटकर फेंक देंगे।" उन्होंने जाते-जाते उसे धमकी दी और थोड़ा-सा और पीटा।

निश्चय ही डाकुओं को मुन्ना साहू के यहाँ खासा माल मिला होगा क्योंकि थोड़े ही अरसे बाद उन्हीं में से दो ने जाने कैसे उसे फिर खोज लिया था। रज्जन डरकर दुबारा पिटने के लिए साहस जुटा रहा था कि उन्होंने अपना प्रस्ताव रख दिया।

सही सूचना देने और उस सूचना से लाभ होने पर बीस रुपये मिलते थे और देशी शराब के साथ उम्दा खाना।

और यह सारी ऐयाशी, नये रोजगार की सारी बारीकियाँ नौबन के हर आदमी को मालूम हो गई थीं। इन्हीं से खीझकर एक दिन नत्थू ने यह सब कुछ पुलिस को बता देने का फैसला कर डाला था।

बहाना बनाकर लम्बी यात्रा करने के बाद जब नत्थू थाने पहुँचा तो उसे लगा वह वहाँ नाहक आ गया था। पुलिस के पास जाने की बात सोचना उसके लिए आसान था पर उससे सामना करते वक्त वह सचमुच घबरा गया। उसे लगा रज्जन वह खुद था और अपने-आपको यहाँ सौंपने आया था। थाने का छोटा दारोगा उसे सामने ही खड़ा मिल गया था। वह खाना खाकर उठा था और दाँत खोदने के बाद पेड़ के नीचे चारपाई पर थोड़ी देर सो लेने की तैयारी में था। उसके सामने पड़ते ही नत्थू की शक्ल

किसी अपराधी जैसी हो गई और उसका गला बिल्कुल खुश्क हो गया।

"कौन है बे ? यहाँ क्या कर रहा है ?" दारोगा ने दाँत से निकली साग की पत्ती जोर से थूकी।

"हुजूर, आपकी खिदमत में आया था।" नत्थू ने किसी तरह कहा।

दारोगा ने उसे तीखी निगाहों से घूरा, फिर चिल्लाकर मिट्टी पर पानी छिड़कते सिपाही से बोला, "अबे, इसे देख तो उधर ले जाकर। खासी हरामी चीज लग रहा है।"

सिपाही ने भी उसे उसी तरह घूरा था। थोड़ी देर बारीकी से उसका मुआयना करने के बाद बाँह के पिछले हिस्से पर पंजा गड़ाकर वह उसे अन्दर की तरफ ले गया था। अन्दर पहुँचते ही नत्थू के कुछ कहने से पहले सिपाही ने उसे अपनी तरफ पुतले की तरह घुमाया और छाती के बीचो-बीच इस तरह बिना कोई उत्तेजना दिखाए घूँसा मारा गोया वह किसी बालू के बस्ते पर घूँसेबाजी का अभ्यास कर रहा हो। घूँसा मारने के साथ ही उसने उलटे हाथ से उसकी कनपटी पर एक थप्पड़ भी मारा। नत्थू थोड़ा झुक गया था पर थप्पड़ पड़ते ही उलटकर दीवार के पास जा गिरा था।

यह रज्जन या नत्थू ही नहीं नौबन के हर छोटे आदमी को मालूम था कि शहजोर से संवाद शुरू होने की भाषा आम तौर पर यही होती थी। इसलिए पहली मार की घबराहट पर उसने जल्दी ही काबू पा लिया, "हुजूर, दारोगा साहब, मैं तो बड़ी जरूरी खबर देने आया था।"

इस पर सिपाही कुछ हिचका लेकिन एक जोरदार ठोकर और मार लेने के बाद ही उसने पूछा, "साला खबर लाया है। क्या खबर लाया है, ऐं ?"

"हुजूर, वो डकैत···।"

"डकैत ? क्या डकैत ?"

"हुजूर, डकैत हरीराम कल डाला डालनेवाला है।"

"इसकी सुनो !" सिपाही जैसे दीवारों से ही बोला, "तेरे पास साले है ही क्या कि हरीराम तुझे लूटेगा। मक्कारी करता है ! साला किसी बेगुनाह को फँसाना चाहता है ! तेरी तो···।" यह कहकर सिपाही ने उसे

थोड़ा और पीटा।

"मगर मेरी बात तो सुन लीजिए हुजूर। बाद में फाँसी पर चढ़ा दीजिएगा। हरीराम कुन्दन को लूटने आयेगा।" नत्थू ने किसी तरह कहा। यह सूचना भी उसे खुद रज्जन की हरकतों से मिल गई थी।

सिपाही ने उसे इस बार पीटा नहीं सिर्फ कुछ फोहश-सी गालियाँ दीं और धक्का देकर दारोगा के पास ले आया।

"अब क्या तकलीफ हो गई जी ?" दारोगा खीझ गया।

"ये हरामी कहता है कि हरीराम कल रात कुन्दन के घर पर डकैती डालेगा।"

"मारो साले को और बन्द कर दो !" दारोगा ने हुक्म दिया।

नत्थू सचमुच ही थोड़ा और पिटा और हवालात में बन्द कर दिया गया। लेकिन दूसरी रात डकैती पड़ गई। डकैती बहुत बुरी तरह पड़ी। उस रात कुन्दन का साला भी आया हुआ था। वह खामपुर के थाने में मुंशी था। उसने डकैतों से थोड़ी-सी पुलिस की शेखी मारने की कोशिश कर दी। बल्कि हरीराम के एक साथी को पकड़कर पटक भी दिया। इसके बाद हरीराम फिल्मोंवाला डकैत बन गया। उसने बुरी तरह लूटा भी और चलते-चलते कतार से खड़ा करके घर के चार मर्दों को गोली भी मार दी। मरनेवालों में वह मुंशी भी था।

थाने पर यह खबर पहुँचते ही नत्थू छोड़ दिया गया। अब वह पुलिस का विश्वसनीय सूत्र बन चुका था।

मारे जानेवालों में से चूँकि एक पुलिस का मुंशी खुद था इसलिए जल्दी ही पुलिस ने दुबारा नत्थू को खोज लिया।

यहाँ से इस खेल ने एक ऐसा मोड़ ले लिया जो कहीं रज्जन और नत्थू दोनों की जिन्दगी से जुड़ता था। हालाँकि इस काम में आमदनी बहुत अच्छी न थी लेकिन कुछ काम तो चल ही जाता था। सबसे बड़ी बात थी कि एक खास किस्म की व्यस्तता का एहसास।

मुखबिरी के इस धन्धे की शुरुआत जहाँ नत्थू और रज्जन की आपसी दुश्मनी से हुई थी वहाँ इसमें विकास की प्रक्रिया दोनों को धीरे-धीरे एक-

दूसरे के इस तरह करीब लाने लगी कि वे काफी हद तक एक-दूसरे के पूरक या सहयोगी हो गए। नत्थू को पुलिस तक पहुँचाई जानेवाली सूचनाएँ अक्सर रज्जन से ही मिलने लगीं क्योंकि पुलिस कार्यवाही के बारे में डकैतों तक पहुँचानेवाली खबरें रज्जन नत्थू से लेने लगा।

यह भी मजे की बात थी कि इस बेहद मशीनी अन्दाज में होनेवाली मुखबिरी से मुखबिर तो खुश थे ही, पुलिस और डकैत भी प्रसन्न थे। दर-असल इन मुखबिरों के कारण दोनों की आसानियाँ बढ़ गई थीं। पुलिस या डाकुओं में से दोनों को पता लग जाता था कि कौन, कहाँ, कब और क्या करेगा। डकैत आते थे और इत्मीनान से लूटकर चले जाते थे। फिर पुलिस आती थी। वह उन अड्डों पर छापा मारती थी जहाँ से डकैत पहले ही भाग चुके होते थे। पुलिस शराब की खाली बोतलें और अधजली सिगरेटें सील करके लौट जाती थी। अभियान दोनों में से किसी के असफल नहीं होते थे।

मगर इस बीच एक भारी गड़बड़ी हो गई। एक मन्त्री का भाई अपने परिवार के साथ मोटर पर रात के वक्त शिकार से लौट रहा था। मोटर रोककर डाकुओं ने उन्हें मार दिया और जो मिला वह लूट ले गए। यह मामला बहुत गम्भीर था और पुलिस और डाकुओं को ही नहीं, नत्थू और रज्जन को भी पता लग गया था कि यह मामला आसान नहीं है।

नत्थू पोटली में बँधी अरहर की फलियाँ बीवी को सौंप देना चाहता था और अगली किसी कार्यवाही से पहले ही गाँव से बाहर कहीं गायब हो जाना चाहता था। उसने मकान के पीछेवाले दरवाजे पर हाथ रखना ही चाहा था कि उसे लगा अन्दर कोई है।

क्या अन्दर पुलिसवाले हैं?

थोड़ी देर अपने-आपको संयत करके उसने दरवाजे ही सन्धि से अन्दर झाँकने का फैसला किया। यह काम आसान न था। उसे मालूम था कि पिछला दरवाजा बेहद आवाज करेगा, जरा-सा छूते ही। आवाजें उसे साफ सुनाई दे रही थीं। वे कुछ अजीब तरह की थीं।

आखिर उसने बहुत सावधानी से दरवाजे की दरार से अन्दर की ओर झाँका। वर्दियाँ तो वही थीं। निश्चय ही वही जो पुलिसवाले पहनते हैं

लेकिन मदनलाल को पहचानने में उसे भूल नहीं हुई। अजब बात थी कि वर्दियाँ दोनों की एक ही होती थीं फिर मुखबिरी इतनी अलग क्यों थी?

उसे ज्यादा सोचने का वक्त नहीं मिला क्योंकि थोड़ा-सा किनारे पड़ी चारपाई पर जो कुछ हो रहा था वह देखकर नत्थू एकाएक सूखकर बदरंग हो गया।

फर्श पर मदनलाल अपने कुछ साथियों के साथ बैठा हुआ मुँह भर-भर-कर कुछ खा रहा था और चारपाई पर बिना किसी कपड़े के उसकी बीवी इस तरह चित लेटी थी जैसे बरसात के मौसम में मनाए जानेवाले त्योहार पर चौराहे पर डालकर छड़ियों से पीटी, फटी गुड़िया।

वह दरवाजे से हट गया। अन्दर की आवाजें बहुत जोर से उसके दिमाग में बज रही थीं। झुककर उसने चुपचाप वे फलियाँ वहीं धूप में रख दीं और लौट चला।

इस बार खेल नहीं, सच। वे लोग यहाँ हैं और अभी रहेंगे। मदनलाल का पूरा गिरोह। भले ही पुलिस आए और उसकी बीवी को उस बेहूदा हालत में देखकर मजे भी ले पर पुलिस को आना होगा।

कतराने के बजाय वह सीधे टीले की तरफ चल पड़ा।

रज्जन के चीखने की आवाज फिर आने लगी थी लेकिन उसी के साथ किशन बाबू ने बच्चों को महात्मा गांधीवाला पाठ जोर-जोर से पढ़ाना शुरू कर दिया था। आज बहुत दिन बाद वे इस तरह पढ़ा रहे थे, शायद रज्जन की चीखों की तरफ से ध्यान हटाने के लिए।

बुखार की तरह जमीन और आसमान को कँपाती गर्मी में जब नत्थू टीले के दूसरी ओर उतरा तो पलकों पर बैठ गई लू के धुँधलके में उसने रज्जन को बाद में देखा, पुलिस ने उसे पहले देखा।

रज्जन बिना किसी कपड़े के धूप में जमीन पर लेटा था या लोट रहा था और एक सिपाही लाठी का सिरा उसकी जाँघों के बीच रह-रहकर कोंच रहा था जैसे पानी की तली नाप रहा हो।

नत्थू पर नजर पड़ते ही वहाँ वह सब थम गया। नत्थू कुछ और तेज कदम बढ़ाकर उन लोगों तक गया और निगाह मिलाए बगैर धीरे से एक सिपाही के कान में बोला, "मदनलाल पूरे गिरोह के साथ मेरे घर में छुपा

है, जल्दी करिए हुजूर···।"

"ये हरामी क्यों आया ?" दारोगा ने दूर से ही पूछा।

सिपाही ने फुर्ती से पास जाकर दारोगा को वह बात बताई। दारोगा थोड़ी देर इस तरह गुमसुम हो गया जैसे वह किसी बहुत जटिल अभियान की तैयारी करने लगा हो फिर सहसा उठ पड़ा। उसने चिल्लाकर जीप-वाले को पुकारा और सिपाहियों से बोला, "इस मुल्जिम को जीप में डालो। और इसे भी बैठा लो। जल्दी करो।" उसने नत्थू की तरफ इशारा किया।

नत्थू को और किसी वक्त यह ठीक नहीं लगता, पर अभी जो कुछ उसने देखा था उसके बाद खुद पुलिस की जीप में बैठकर निहत्थे ही सही, गिरोह तक जाने में संकोच नहीं रह गया था। वह खुद ही जीप के पिछले भाग में बैठ गया।

रज्जन को सीटों के बीच में डालकर सिपाही बहुत फुर्ती से जीप में आ बैठे। दारोगा के बैठते ही जीप रवाना हो गई।

"चक्कर ले लो। उधर बबूल के जंगल की तरफ से निकलो।"

जीप गाँव के पीछे की ओर गई जरूर लेकिन नौबन की तरफ मुड़ी नहीं बल्कि थोड़ी दूर ही निकल गई। नत्थू ने इस बात पर ध्यान दिया पर उसने सोचा कि शायद पुलिस अपने ढंग से डाकुओं को घेरने की कोशिश कर रही है।

तभी दारोगा बोला, "रोको।"

जीप रुक गई। उसने रज्जन की पसली पर जूते की नोक चुभाकर कहा, "इसे कहो उतरे। न उतरे तो नीचे फेंक दो।"

इस तरह का आदमी शायद ज्यादा ही मजबूत हो जाता होगा, क्योंकि सिपाहियों की थोड़ी-सी कोशिश से रज्जन न सिर्फ नीचे आ गया बल्कि लड़खड़ाता हुआ खड़ा भी हो गया।

"तू भी नीचे उतर।" दारोगा ने नत्थू को डाँटा। डाँट से थोड़ा शर्मिन्दा होकर नत्थू भी नीचे उतर आया।

उनके नीचे उतरते ही दारोगा चीखा, "भाग, फौरन भाग !"

नत्थू समझ नहीं पाया।

"अबे, तुम लोग भागते हो या नहीं ! लगाऊँ मार ?" दारोगा फिर

चीखा।

नत्थू पहले तो पीछे हटा फिर बहुत धीमी चाल में भागने लगा। अब चूँकि उसकी पीठ जीप की तरफ थी इसलिए वह कुछ देख नहीं सका सिर्फ उसे रज्जन की ऐसी कातर आवाज सुन पड़ी जैसे वह भीख माँग रहा हो और उसे देखने के लिए सिर घुमाने से पहले ही उसने कान फाड़ देनेवाली गोली की आवाज सुनी। वह पीछे मुड़कर देखना चाहता था पर तभी उसे जैसे किसी ने पीछे से भयानक धक्का दिया और सामने सीने के पास मांस का लोथड़ा-सा लटक आया। वह डगमगाया और नीचे गिर गया। परिन्दे उड़कर जबर्दस्त शोर करने लगे। गिरने के बाद जाने क्या हुआ कि उसका दर्द बिल्कुल खामोश हो गया।

जीप पीछे हटी और वापस चली गई। दोनों लाशें वहीं पड़ी रहीं। जाने कब पुलिसवाले उनके पास एक जंग लगा तमंचा फेंक गए थे। परिन्दे थोड़ी देर में फिर शान्त हो गए, पर उस उदास पक्षी की आवाज उसी तरह सुनाई देती रही—उठो पुत्तू, पूर पूर पूर—